रिपोर्टेबल

भारत का उच्चतम न्यायालय

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल याचिका संख्या 2500/2001

राजस्थान राज्य ....अपीलकर्ता

बनाम

मेसर्स नव भारत कंस्ट्रक्शन कंपनी ...प्रत्यर्थी

साथ में

सिविल अपील संख्या 2501/2001

निर्णय

तारून चटर्जी, न्यायाधिपति

1. अपीलकर्ता, राजस्थान राज्य ने भीमसागर बांध के निर्माण के लिए निविदाएं आमंत्रित कीं, जिसमें निविदाकारों में से एक प्रत्यर्थी था। प्रत्यर्थी की निविदा स्वीकार कर ली गई। तदनुसार, प्रत्यर्थी को एक अनुबंध दिया गया था और अनुबंध के तहत 16 नवंबर, 1978 को काम शुरू किया जाना था और पूरा होने की तारीख 15 मई, 1981 को तय की गई थी। अनुबंध की शर्तों में से एक यह थी कि यदि पक्षों के बीच कोई मतभेद या विवाद

उत्पन्न होता है, तो ऐसे विवाद या मतभेद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित किया जाएगा। हालांकि, काम आवंटित समय के भीतर पूरा नहीं हुआ था और इसके बाद समय बढ़ाया गया। समय बढ़ाने के बावजूद काम पूरा नहीं हो सका। इस कारण से, राजस्थान राज्य ने अनुबंध को समाप्त कर दिया और शेष काम किसी अन्य ठेकेदार से करवा लिया।

2. प्रत्यर्थी ने विभिन्न दावे किए जिन्हें राजस्थान राज्य ने खारिज कर दिया। इसलिए, प्रत्यर्थी ने मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 20 (संक्षेप में 'अधिनियम') के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें उसमें उल्लिखित दावों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित किया गया था। जिला न्यायाधीश, झालावाड़ ने 11 नवंबर, 1982 के एक आदेश द्वारा अभिनिर्धारित किया कि केवल एक दावा मध्यस्थता के लिए संदर्भित था और अन्य तीन दावों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने से इनकार कर दिया। प्रत्यर्थी ने राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर के समक्ष एक अपील दायर की और उच्च न्यायालय ने 7 जून, 1984 के अपने आदेश द्वारा अभिनिर्धारित किया कि यह निर्णय करना मध्यस्थ का काम है कि दावे दिए जाने हैं या नहीं और तदनुसार निर्देश दिया कि सभी चार दावों को मध्यस्थता के लिए भेजा जाए। विवादों को दो मध्यस्थों को भेजा गया था। हालांकि, प्रतिवादी ने मध्यस्थों के समक्ष Rs.42,59,155.56 की राशि के 39 दावे दायर किए। पक्षों ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पेश किये। दोनों मध्यस्थों के बीच मतभेद था। इसलिए, मध्यस्थों ने विवाद को एक

अंपायर को संदर्भित किया। इसके बाद राजस्थान राज्य, जो यहाँ अपीलकर्ता है, ने पक्षपात के आधार पर अंपायर को हटाने के लिए अधिनियम की धारा 11 के तहत एक आवेदन दायर किया। यह आवेदन 16 नवंबर, 1993 को खारिज कर दिया गया। अपीलार्थियों ने एक पुनरीक्षण मामला दायर किया जिसे जनवरी, 1995 में उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया। अंपायर ने संदर्भ में प्रवेश किया और 29 मई, 1995 को एक पंचाट पारित किया।

3. राजस्थान राज्य, यहाँ अपीलकर्ता, ने अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत आपत्तियां दर्ज कीं जिन्हें विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया और अपील में प्रतिवादी ने चक्रवृद्धि ब्याज का दावा करते हुए एक प्रति अपील दायर की। उच्च न्यायालय ने एक निर्णय द्वारा दोनों अपीलों को खारिज कर दिया। व्यथित होकर हुए, दोनों पक्षों ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया और दो दीवानी अपीलें दर्ज की गईं। C.A.No. 2500/2001 राजस्थान राज्य द्वारा थी जो अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत दायर उनकी आपत्ति को खारिज करने से व्यथित थी और C.A.No. 2501/2001 प्रत्यर्थी द्वारा चक्रवृद्धि ब्याज के लिए उनके दावे को खारिज करने के खिलाफ थी। उपर्युक्त दोनों अपीलों में पारित 4 अक्टूबर, 2005 के एक निर्णय और आदेश द्वारा इस न्यायालय ने अंपायर के पंचाट और उच्च न्यायालय के निर्णय को निम्नलिखित निर्देशों द्वारा अपास्त कर दिया थाः

"यहाँ पेश किये गए उपरोक्त परिस्थितियों और कारणों से, हम पंचाट को अपास्त करते हैं और इस न्यायालय के न्यायाधीश एन. संतोष हेगड़े, एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश को अंपायर के रूप में नियुक्त करते हैं। अंपायर, श्री वी.के.गुप्ता सभी कागजात और दस्तावेज तुरंत न्यायाधीश एन.संतोष हेगड़े के निवास 9, कृष्णा मेनोन मार्ग, न्यू दिल्ली पर भेज देंगे। पक्षकार न्यायाधीश एन. संतोष हेगड़े के समक्ष 6.10.2005 को 5 बजे 9, कृष्ण मेनन मार्ग, नई दिल्ली पर उपस्थित होंगे। न्यायाधीश एन. संतोष हेगड़े अपनी फीस तय करेंगे जो दोनों पक्षों द्वारा समान रूप से वहन की जाएगी। न्यायाधीश एन. संतोष हेगड़े से अनुरोध है कि वह अनुसूची करें जरी करें और निवर्तमान अंपायर श्री वी. के. गुप्ता से सभी कागजात और दस्तावेज प्राप्त होने की तारीख से 4 महीने की अवधि के साथ अपना पंचाट दें। इस न्यायालय में पंचाट दायर किया जाना है। हम ब्याज देने के सवाल को अंपायर द्वारा कानून के अनुसार तय करने के लिए खुला छोड़ते हैं।

अंत में, यह स्पष्ट किया जाता है कि यह एक नया संदर्भ नहीं है, बल्कि पहले की कार्यवाही की निरंतरता

है और इस प्रकार मध्यस्थता अधिनियम, 1940 लागू होता रहेगा।"

4. तदनुसार, इस न्यायालय के फैसले के अनुपालन में, जैसा कि ऊपर कहा गया है, श्री जस्टिस एन. संतोष हेगड़े (जैसा कि उनका लॉर्डशिप तब था), संदर्भ में प्रवेश किया और 9 सितंबर, 2006 को अपना पंचाट पारित किया। अब राजस्थान राज्य ने पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने के लिए एक आवेदन दायर किया है और साथ ही प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत आपत्ति दायर की है। प्रत्यर्थी द्वारा एक अंतर्वर्ती आवेदन भी दायर किया गया था जिसमें इस न्यायालय द्वारा पंचाट को आत्यन्तिक बनाया जाने के अधिकार क्षेत्र को चुनौती दी गई थी और 4 अक्टूबर, 2005 को पारित आदेश के अनुसार में अम्पायर द्वारा पारित पंचाट के खिलाफ प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई आपत्तियों पर भी विचार किया जाए। प्रत्यर्थी के अनुसार, जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ, पक्षकारों द्वारा दायर आवेदन और आपत्तियों को कानून के अनुसार निर्णय लेने के लिए सक्षम क्षेत्राधिकार वाली अदालत में वापस भेजा जाना चाहिए, क्योंकि निर्णय पारित होने के बाद और पहले के पंचाट को विवादित निर्णय द्वारा अलग कर दिया गया था, यह न्यायालय ऐसे आवेदनों पर विचार करने के लिए कार्यात्मक अधिकारी बन गया था। इसलिए, इससे पहले कि हम अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई आपत्तियों और पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने के लिए आवेदन के

बारे में प्रश्न में जाएं, हमें पहले अंतर्वर्ती आवेदन से निपटना चाहिए, अर्थात, क्या यह न्यायालय अभी भी अंपायर द्वारा पारित पंचाट पर विचार करने या उसी पर आपत्तियों पर विचार करने के लिए अधिकार क्षेत्र रखता है या मामला कानून के अनुसार उक्त आवेदन और आपत्तियों पर विचार करने के लिए सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय में वापस जाना चाहिए। व्यक्तिगत रूप से उपस्थित श्री मूल चंद लुहाडिया, के अनुसार अपील के निपटारे के बाद इस न्यायालय का अधिकार क्षेत्र समाप्त हो गया है और एक नया अंपायर नियुक्त किया गया था जिसने 9 सितंबर, 2006 को एक पंचाट पारित किया था। इस तर्क के समर्थन में कि इस न्यायालय के पास अपीलकर्ता द्वारा अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने के लिए दायर आवेदन पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं हो सकता है और अधिनियम की धारा 30 बनाम 33 के तहत दायर आपत्ति पर भी, उन्होंने इस न्यायालय के कुछ निर्णयों पर सहारा लिया, जिनमें से गढ़वाल मंडल विकास निगम लिमिटेड बनाम कृष्णा ट्रैवल एजेंसी [2008 (6) एससीसी 741] और भारत कोकिंग कोल लिमिटेड बनाम अन्नपूर्णा कंस्ट्रक्शन [2008 (6) एससीसी 732] में निर्णय पर विशेष जोर दिया। श्री लुहाडिया की यह प्रस्तुति, जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए थे, श्री पल्लव शिशोदिया द्वारा लड़ी गई थी, जो राजस्थान राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता थे। श्री शिशोदिया के अनुसार, इस न्यायालय के मैकडरमोट इंटरनेशनल इंक. बनाम बर्न स्टैण्डर्ड कंपनी लि. और अन्य [2005 (10) एस.सी.सी. 353] में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले को

देखते हुए, यह प्रश्न अब अनिर्णीत विषय नहीं है। हमारे विचार में, श्री शिशोदिया की प्रस्तुति को स्वीकार किया जाना चाहिए। इस न्यायालय के दिनांक 4 अक्टूबर, 2005 के निर्णय से, इस न्यायालय द्वारा उसी के संचारी भाग में, जैसा कि यहाँ पहले उल्लेख किया गया है, यह स्पष्ट किया गया है कि अंपायर द्वारा पारित किया जाने वाला पंचाट इस न्यायालय में दाखिल किया जाना चाहिए और दूसरा यह निर्णय में ही स्पष्ट किया गया था कि यह एक नए संदर्भ का मामला नहीं था, बल्कि पहले की कार्यवाही की निरंतरता थी और इस प्रकार अधिनियम लागू करना जारी रहेगा। मैकडरमोट इंटरनेशनल इंक. (ऊपर) में, इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय में स्पष्ट रूप से कहा कि चूंकि मध्यस्थ को इस न्यायालय में अपना अधिनिर्णय दाखिल करने का निर्देश दिया गया था, अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने के लिए अपीलकर्ता के आवेदन की आपत्तियों के साथ-साथ स्वीकार्यता को केवल इस न्यायालय में दायर किया जाना चाहिए और इसलिए, इस न्यायालय को अपीलकर्ता के आवेदन और प्रत्यर्थी द्वारा दायर आपत्तियों पर भी विचार करने की अधिकार क्षेत्र है। ऊपर की गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए और इस न्यायालय के तीन-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय, अर्थात् मैकडरमॉट इंटरनेशनल (उपर्युक्त) को ध्यान में रखते हुए, हमारे लिए अन्य दो निर्णयों से निपटने की आवश्यकता नहीं होगी जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। इसके अलावा, 4 अक्टूबर, 2005 के निर्णय में, यह स्पष्ट किया गया है कि अधिनिर्णय इस न्यायालय में दाखिल किया जाना था और इसे एक नए संदर्भ के रूप

में नहीं बल्कि पिछली कार्यवाही की निरंतरता के रूप में लिया जाना था, इस प्रकार अधिनियम लागू रहेगा। तदनुसार, उपर्युक्त दो आवेदनों, अर्थात् अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने के लिए आवेदन और इस न्यायालय में दायर अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत आपत्तियों के संबंध में प्रश्न बिल्कुल भी उत्पन्न नहीं हो सकता।

5. आइए अब अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट के खिलाफ प्रतिवादी द्वारा दायर आपत्तियों पर विचार करें। चूंकि हम पहले ही द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर चुके हैं।इस न्यायालय द्वारा दो आवेदनों की स्वीकार्यता के बारे में प्रतिवादी, अब हम उनके पक्ष में एक पंचाट पारित करने के लिए उनके द्वारा किए गए विभिन्न दावों के संबंध में प्रतिवादी द्वारा दायर आपत्तियों पर विचार करते हैं। श्री लुहाडिया के अनुसार, चूंकि अंपायर श्री वी. के. गुप्ता का पहला पंचाट अपास्त कर दिया गया था, और उक्त पंचाट को अपास्त करने के बाद एक नए अंपायर की नियुक्ति की गई थी, इसलिए इस न्यायालय के फैसले से यह स्पष्ट हो जाएगा कि इस न्यायालय का इरादा प्रतिवादी को दावा संख्या 2 और 26 सहित उसके द्वारा किए गए दावों पर अपनी सभी आपत्तियां उठाने की अनुमति देना था। हम श्री लुहाडिया के इस तर्क को प्रतिग्रहण करने में असमर्थ हैं। जहां तक दावा संख्या 2 और 26 का संबंध है, इस अदालत के फैसले के अवलोकन पर, श्री लुहाडिया के तर्क को प्रतिग्रहण करना करना मुश्किल है क्योंकि हम उक्त फैसले से पाते हैं कि

दावा संख्या 2 और 26 पर निर्णय में विस्तृत रूप से विचार किया गया था और यह न्यायालय उक्त निर्णय में दावा संख्या 2 और 26 के संबंध में एक स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रतिवादी ऐसे दावों का हकदार नहीं होगा। दावे सं. 2 और 26 को अस्वीकार करते हुए इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से निम्नलिखित टिप्पणियां कीं जिन्हें हम नीचे पुनः प्रस्तुत करते हैंः

> "जहां तक दावा संख्या 2 की बात है, श्री लुहादिया ने उचित रूप से यह स्वीकार किया कि अनुबंध के खंड 5.11 (iii) में सभी ओर से पत्थरों को काटने की अपेक्षा की गई है। हालांकि उन्होंने कहा कि अनुसूची जी दी गई दरें केवल एक तरफ पत्थरों को काटने के लिए थीं। उन्होंने कहा कि किया कि यह अनुसूची जी के तहत नोट 1 से स्पष्ट था जिसमें कहा गया था कि अनुसूची जी B.S.R 1975 पर आधारित थी। उन्होंने कहा कि कि B.S.R. 1975 से पता चला कि इस तरह की दरें केवल एक तरफ पत्थरों को काटने के लिए थीं। उन्होंने प्रस्तुत किया कि जब पत्थर को सभी तरफ से छेना जाना है तो B.S.R 1975 में दी गई दरों को लागू किया जाना था। उन्होंने कहा कि किया कि दावा नं. 2 उन दरों पर आधारित था। हम श्री लुहाडिया के इस निवेदन को प्रतिग्रहण करने में असमर्थ हैं। अनुबंध

बहुत विशिष्ट है। अनुबंध में निर्दिष्ट कार्य अनुसूची 'जी' में निर्दिष्ट दरों पर किया जाना था। भले ही अनुसूची जी B.S.R 1975 पर आधारित हो। यह बिल्कुल B.S.R 1975 जैसा नहीं है। जहां अनुबंध में निर्दिष्ट कार्य के संबंध में अनुसूची जी में दर दी गई है, वह कार्य केवल उसी दर पर किया जा सकता है। अनुबंध में निर्दिष्ट कार्य अतिरिक्त कार्य नहीं बन जाते हैं। यह केवल अतिरिक्त काम के संबंध में है जो B.S.R 1975 में निर्दिष्ट दरों पर किया जा सकता है। हमारे लिए यह स्पष्ट है कि दावा नं. 2 अनुबंध की शर्तों के विपरीत है। यह अनुबंध के खंड 57,60 और 61 द्वारा वर्जित है। जहां तक दावे संख्या 26 की बात है, श्री लुहाडिया ने तारापुर एंड कंपनी बनाम मध्य प्रदेश राज्य [1994 [3] एससीसी 521] के मामले पर भरोसा किया। इस मामले में, सवाल यह था कि क्या ठेकेदार अतिरिक्त राशि का दावा करने का हकदार था क्योंकि उसे अपने श्रमिकों को बढ़ी हुई मजदूरी का भुगतान करना था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि ठेकेदार ने तत्कालीन प्रचलित मजदूरी के आधार पर निविदा दी होगी और अनुबंध के लिए ठेकेदार को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने की आवश्यकता होती है यदि

न्यूनतम मजदूरी में वृद्धि होती है तो यह अनुबंध की एक निहित अवधि थी कि वह अतिरिक्त राशि का दावा करने का हकदार नहीं होगा। हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि, इस मामले में, अनुबंध में ऐसी कोई अवधि नहीं थी जो मजदूरी में वृद्धि के कारण किए जा रहे किसी भी अतिरिक्त दावे को प्रतिबंधित करती हो। अनुबंध की विशेष शर्तों का खंड 31, जिसे ऊपर पुनः प्रस्तुत किया गया है, विशेष रूप से ठेकेदार को ऐसी परिस्थितियों में किसी भी मुआवजे या दर में वृद्धि का दावा करने से रोकता है। इतना ही नहीं, प्रत्यर्थी ने अपनी प्रारंभिक निविदा के साथ एक अवधि निर्धारित की थी जिसमें यह प्रावधान था कि यदि सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी में कोई वृद्धि की जाती है तो उसके द्वारा उद्धृत दरों में प्रतिशत के बराबर वृद्धि की जाएगी। बातचीत के समय इस खंड को हटा दिया गया था। इस प्रकार, प्रत्यर्थी ने स्वयं मजदूरी में वृद्धि के कारण किसी भी मुआवजे या वृद्धि का दावा नहीं करने पर विशेष रूप से सहमति व्यक्त की थी। इसलिए यह दावा मंजूर नहीं किया जा सकता था।"

इस न्यायालय के निर्णय के इस पैराग्राफ 30 को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने निर्णय में दावे संख्या 2 और 26 पर विस्तार से विचार किया है और अभिलेख पर सामग्री और पक्षों के बीच अनुबंध की शर्तों पर विचार करने पर उपरोक्त दो दावों को खारिज किया है। मामले के इस दृष्टिकोण में, हमें अंपायर के इस निष्कर्ष को प्रतिग्रहण करना करना चाहिए कि चूंकि इन दोनों दावों पर स्पष्ट रूप से और विस्तृत रूप से विचार किया गया था और उसके बाद इस न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय में खारिज कर दिया गया था, इसलिए पंचाट पारित करते समय उनके लिए इस पर पुनर्विचार करने का अधिकार नहीं था। उपरोक्त निर्णय में इस न्यायालय द्वारा लिए गए इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, अंपायर द्वारा पंचाट पारित करते समय इस पर पुनर्विचार नहीं करना पूरी तरह से उचित था।

6. अधिनियम की धारा 30 के तहत एक पंचाट को अपास्त करने के क्षेत्राधिकार को अब इस न्यायालय के साथ-साथ भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों द्वारा निपटारा किया गया है। उन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, इस प्रकार यह स्पष्ट होगा कि अधिनियम की धारा 30 के तहत यह कहा जाना चाहिए कि न्यायालय को साक्ष्य की पुनः सराहना करने और पंचाट को अलग करने के लिए एक आवेदन पर विचार करने में अंपायर द्वारा किए गए निष्कर्षों की शुद्धता की जांच करने का अधिकार नहीं है। इस संबंध में, हम इस न्यायालय द्वारा भगवती

ऑक्सीजन लिमिटेड बनाम हिन्दुस्तान **कूपर लिमिटेड [2005 (6) एससीसी 462]** के मामले में दिए एक निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं। **उस निर्णय में, इस न्यायालय ने पैराग्राफ 25 में निम्नलिखित रूप में टिप्पणी कीः-**

> "इस अदालत ने कई मामलों में अधिनियम की धारा 30 के प्रावधानों पर विचार किया है और अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय धारा 30 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, साक्ष्य की फिर से सराहना नहीं कर सकती है या मध्यस्थ द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की शुद्धता की जांच नहीं कर सकती है। अधिकार क्षेत्र प्रकृति में अपीलीय नहीं है और एक मध्यस्थ द्वारा पारित एक पंचाट को इस आधार पर अलग नहीं किया जा सकता है कि यह गलत था। न्यायालय के लिए यह खुला नहीं है कि वह केवल इसलिए निर्णय में हस्तक्षेप करे क्योंकि न्यायालय की राय में, दूसरा दृष्टिकोण समान रूप से संभव है। यह तभी होता है जब न्यायालय संतुष्ट होता है कि मध्यस्थ ने स्वयं का गलत संचालन किया था या कार्यवाही या पंचाट अनुचित रूप से प्राप्त किया गया था या "अन्यथा"

अमान्य है कि न्यायालय ऐसे पंचाट को रद्द कर सकता है।"

7. इसी प्रकार भारतीय खाद्य निगम बनाम चंदू कंस्ट्रक्शन [2007 (4) एससीसी 697] के मामले में जिसमें हम में से एक (चटर्जी, जे.) भी एक पक्षकार थे, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब मध्यस्थ या अंपायर, जैसा भी मामला हो, ने विशिष्ट शर्तों की अनदेखी की थी या अनुबंध के परिक्षेत्र से परे कार्य किया था, तो इस न्यायालय के लिए अधिनियम की धारा 30 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए खुला था कि वह इस आधार पर पंचाट को अपास्त कर दे कि मध्यस्थ जो उचित समझता है उसे करने के लिए वह कानून की अनदेखी नहीं कर सकता है या अनुबंध की शर्तों का गलत इस्तेमाल नहीं कर सकता है। इसके अलावा, कानून का भी तय है, जैसा कि इसमें पहले उल्लेख किया गया है, कि अधिनियम की धारा 30 के तहत न्यायालय का क्षेत्राधिकार प्रकृति में अपीलीय नहीं है और अंपायर द्वारा पारित पंचाट को इस आधार पर अपास्त नहीं किया जा सकता है कि यह गलत था। न्यायालय के लिए यह भी खुला नहीं है कि वह केवल इसलिए निर्णय में हस्तक्षेप करे क्योंकि न्यायालय की राय में, दूसरा दृष्टिकोण समान रूप से संभव है। उपरोक्त दो निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित इन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, अब हमें दावा संख्या 2 और 26 को छोड़कर प्रतिवादी के दावों के संबंध में अंपायर द्वारा पारित पंचाट पर विचार करना चाहिए।

8. चूंकि प्रतिवादी का दावे संख्या 4, 6, 9, 13, 23, 32, 33, 36 और 38 अंपायर द्वारा स्वीकार किये गए थे और पंचाट प्रतिवादी के पक्ष में उक्त दावों के संबंध में पारित किया गया है, इसलिए हमारे लिए पंचाट के इस भाग से आगे निपटना आवश्यक नहीं होगा। जहाँ तक दावा सं. 1, 3, 5, 7, 8, 10, 11, 12, 14-22, 24, 25, 27, 28, 29, 30, 31, 34, 35, 37 और 39 का संबंध है, हमने पाया कि अंपायर ने प्रतिवादी की आपत्तियों पर गौर करने और इन दावों के संबंध में पक्षों को सुनने के बाद इसे खारिज कर दिया और हमें इस आधार पर उक्त पंचाट को रद्द करने का कोई कारण नहीं मिला कि यह न्यायालय का अपीलीय प्रकृति का अधिकार क्षेत्र नहीं है और न ही ऐसा कोई पंचाट त्रुटिपूर्ण पाया जा सकता है। तदनुसार, हमें इस संबंध में प्रत्यर्थी की आपत्तियों को प्रतिग्रहण करना करने का कोई कारण नहीं मिलता है। आपत्तियों को खारिज किया जाता है।

9. इस निर्णय से पहले, हमें स्तर पर एक और पहलू पर विचार किया जाना चाहिए। जैसा कि यहाँ पहले उल्लेख किया गया है, प्रत्यर्थी ने चक्रवृद्धि ब्याज दर का दावा किया है जो अंपायर द्वारा प्रदान नहीं की गई थी। दावेदार ने तिमाही शेष के साथ चक्रवृद्धि ब्याज का दावा किया था जबकि प्रतिवादी ने ब्याज की उक्त दर का विरोध किया था। दावेदार के उक्त दावे को खारिज करते हुए, अंपायर ने ठीक ही कहा था कि उसके लिए ब्याज की कोई अन्य दर तय करने की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि अंपायर द्वारा पारित पंचाट के आधार पर, दावेदार को प्राप्त पर्याप्त राशि को

वापस करना था। इसे ध्यान में रखते हुए, अंपायर ने अपने पंचाट में निर्देश दिया कि राशि का अंतर जो अब पंचाट के आधार पर वापसी योग्य हो गया है, दावेदार द्वारा वसूली की तारीख से ब्याज के साथ राजस्थान राज्य को वापस कर दिया जाएगा और पिछले अंपायर द्वारा पुनर्भुगतान/वसूली की तारीख तक इसकी अनुमति दी गई थी।

10. हमें इस आधार पर अंपायर के पंचाट से भिन्न होने का कोई कारण नहीं मिलता है, क्योंकि अंपायर ने हितों के सभी पहलुओं पर सही विचार किया है और एक पंचाट पारित किया है जिसे कभी भी गलत तरीके से अस्वीकार नहीं कहा जा सकता है।

11. उपर्युक्त कारणों से, हम अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने के लिए आवेदन को अनुमति देते हैं और प्रत्यर्थी द्वारा अधिनियम की धारा 30 और 33 के तहत दायर आपत्तियों को अस्वीकार करते हैं। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

न्यायाधिपति [तरुण चटर्जी]

न्यायाधिपति [आर.एम.लोढ़ा]

नई दिल्ली;

08 जनवरी, 2010.

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।

अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।